Pedagogy Insights
An International Peer reviewed Journal of Multidisciplinary research

Vol. 1, Issue. 2, July-September 2026, 79–85
ISSN: 3139-843X
DOI:

कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त की समकालीन भू-राजनीति में प्रासंगिकता

डॉ. देवेन्द्र सिंह राजपूत[1*]

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़, devendra.rajput@cuh.ac.in

Abstract

भारतीय राजनीतिक चिंतन परम्परा अत्यन्त प्राचीन, व्यावहारिक एवं बहुआयामी रही है। वैदिक साहित्य में सभा, समिति एवं विदथ जैसी राजनीतिक संस्थाओं के उल्लेख से लेकर धर्मशास्त्र, स्मृतियों तथा नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों तक राज्य, शासन, राजधर्म, कूटनीति एवं अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों का निरन्तर विवेचन प्राप्त होता है। इस परम्परा को आचार्य कौटिल्य ने *अर्थशास्त्र* में एक सुव्यवस्थित एवं व्यावहारिक राजनीतिक सिद्धान्त के रूप में विकसित किया। विशेषतः षष्ठ अधिकरण में प्रतिपादित मण्डल सिद्धान्त राज्य के पारस्परिक सम्बन्धों, शक्ति-सन्तुलन, सुरक्षा, सहयोग एवं प्रतिस्पर्धा को समझने का महत्त्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है। इसमें विजिगीषु को केन्द्र में रखकर बारह प्रकार के राज्यों का विवेचन भूराजनितिक दृष्टि से अत्यन्त प्रासंगिक है।

प्रस्तुत शोध में कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त की मूल अवधारणाओं का विश्लेषण करते हुए उनकी समकालीन भू-राजनीतिक प्रासंगिकता का अध्ययन किया गया है। आधुनिक अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों में राज्य-सम्बन्ध केवल भौगोलिक निकटता पर आधारित न होकर सुरक्षा, अर्थव्यवस्था, व्यापार, ऊर्जा, प्रौद्योगिकी, संस्कृति, सामरिक हित तथा कूटनीतिक प्राथमिकताओं से भी निर्धारित होते हैं। भारत-चीन सम्बन्ध, भारत-अमेरिका सम्बन्ध, भारत-रूस सम्बन्ध तथा बहुपक्षीय संगठनों में भारत की सक्रिय भूमिका इस परिवर्तनशील सम्बन्ध-व्यवस्था को स्पष्ट करती है। वर्तमान युग में किसी राज्य को स्थायी रूप से मित्र अथवा शत्रु मानने की अपेक्षा क्षेत्र-विशिष्ट सहयोग, रणनीतिक प्रतिस्पर्धा, शक्ति-सन्तुलन तथा बहु-संरेखण की दृष्टि अधिक उपयुक्त है। अतः कौटिल्य का मण्डल सिद्धान्त आधुनिक भू-राजनीति की स्पष्ट व्याख्या न होकर राष्ट्रीय हित, शक्ति-सन्तुलन, रणनीतिक साझेदारी एवं अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों के विश्लेषण हेतु एक महत्त्वपूर्ण वैचारिक ढाँचा प्रदान करता है।

Keywords: कौटिल्य, अर्थशास्त्र, मण्डल सिद्धान्त, भू-राजनीति, विजिगीषु, शक्ति-सन्तुलन, कूटनीति, रणनीतिक साझेदारी, बहु-संरेखण।

ARTICLE HISTORY

Received: 10 September 2026, **Accepted:** 12 September, **Published:** 20 September

CITATION

कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त की समकालीन भू-राजनीति में प्रासंगिकता
Pedagogy Insights, 1(1), 79-85.
DOI:

COPYRIGHT: © 2026 The Author(s). This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0International License (CC-BY 4.0), which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited. See http://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

भूमिका

भारतीय चिंतन परंपरा आदिकाल से ही ज्ञान केन्द्रित रही है जहां ज्ञानविज्ञान की सभी शाखाएं समान रूप से पुष्पित एवं पल्लवित हुई हैं। वैदिक काल से ही राजनीतिक संस्थाओं – सभा, समिति, विदथ का उल्लेख मिलना यह सिद्ध करता है कि भारतीय जीवन पद्धति में नीति, धर्म, राजनीति इत्यादि विषयों की व्यवहारिक महत्ता थी। भारत में नीति विषयक चिंतन अत्यन्त प्राचीन एवं लगातार चला आ रहा है। नीतिशास्त्र को ही आचारशास्त्र माना गया। नीतिशास्त्र दर्शनशास्त्र की एक शाखा है जिसमें नैतिक मूल्य और उससे जुड़े आचरण के नियम शामिल होते हैं। समाज के सही ढंग से संचालन के लिए नीतिशास्त्र ज़रूरी है। *विदुरनीति, चाणक्यनीति, पंचतंत्र* और *हितोपदेश* जैसे नीति-शास्त्र के ग्रंथ भारतीय ज्ञान परंपरा में उपलब्ध हैं। इनमें धर्मशास्त्र का संबंध भी नीति-शास्त्र से है जहां सामाजिक व्यवहार के नियम बताए गए हैं।

भारतीय शास्त्र परंपरा का मूल आधार चार पुरुषार्थों की प्राप्ति है। मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है। पहले तीन पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) मोक्ष प्राप्ति के मार्ग के साधनमात्र हैं। उदाहरण के लिए, मनुस्मृति में आचार्य मनु ने सदाचार और अहिंसा को सर्वोच्च धर्म माना है। यहाँ धर्म का अर्थ कर्तव्य, नैतिकता और व्यवहार-ज्ञान से है। उन्होंने राजधर्म को धर्म का ही पर्याय माना।

अर्थ का संबंध अर्थव्यवस्था से है। *अर्थशास्त्र* में आचार्य कौटिल्य ने 'अर्थ' की प्रधानता एवं महत्त्व पर बल दिया है। सामान्यतया 'अर्थ' शब्द का प्रयोग धन, संसाधनों, संपत्ति आदि के लिए किया जाता था। आचार्यों का कथन है कि मनुष्यों की मूल प्रवृत्ति ही एकमात्र 'अर्थ' है। इसलिए अर्थशास्त्र में अर्थ का आशय शासन-व्यवस्था के सुचारु संचालन हेतु धनार्जन के उपाय बताना माना जाता है।

आचार्य कौटिल्य ने इसी उद्देश्य से *'अर्थशास्त्र* नामक एक विशाल ग्रंथ की रचना की, जिसमें राजधर्म, कूटनीति और सामाजिक व्यवस्था का विस्तृत विवेचन मिलता है। अर्थ राज्य का मूल आधार है। इसके माध्यम से देश की शक्ति को परिभाषित एवं आंकलित किया जाता है और अन्य राष्ट्र उसकी शक्ति के अनुसार ही उसके साथ व्यवहार करते हैं।

1. प्राचीन भारतीय राजनैतिक चिंतन

प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन धर्म पर आधृत रहा क्योंकि यहां धर्मशास्त्र में उल्लिखित धर्म शब्द कर्त्तव्य का द्योतक था। राजनीतिक चिंतन का अध्ययन धर्मशास्त्र में ही किया जाता था। राजा को धर्म का संरक्षक माना जाता था और वह राज्य से जुड़े सभी निर्णय धर्म के अनुसार ही लेता था। राजसभा में धर्मशास्त्रज्ञ वरिष्ठ आचार्यों से मंथन कर के ही निर्णय लिये जाते थे। वैदिक काल में राजनीति से जुड़ी कुछ संस्थाओं, जैसे समिति और सभा का उल्लेख मिलता है। अथर्ववेद में समिति का उल्लेख है। राजनीति विज्ञान को 'राजधर्म' कहा जाता था। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में राजधर्म का उल्लेख मिलता है, लेकिन राजनीति विज्ञान कोई अलग ग्रंथ नहीं था। उदाहरण के लिए वेदों में सभाओं, समितियों, विदथों का उल्लेख है और ब्राह्मण ग्रंथों में राज्य-संचालन से संबंधित सिद्धांतों का वर्णन है। स्मृतियों में राज्य के धर्म का उल्लेख किया गया है। हालाँकि, राजनीति पर पूरी तरह से केंद्रित कोई भी ग्रंथ आसानी से उपलब्ध नहीं है। कौटिल्य ने राजनीति विज्ञान को धर्म की परिधि से पृथक कर एक स्वतंत्र विधा के रूप में पहचान दिलायी। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में राजनीति के सभी सिद्धांतों का सुव्यवस्थित विवेचन किया है। कौटिल्य ने केवल सैद्धांतिक राजनीति का ही प्रस्ताव नहीं रखा, बल्कि एक व्यावहारिक और प्रयोग-आधारित राजनीति की स्थापना की। उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों से जो कुछ सीखा, उसे अपनी पुस्तक

अर्थशास्त्र के रूप में संकलित किया। राज्य के आंतरिक और बाहरी पक्षों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्र की प्रगति और सुशासन के लिए अनेक सिद्धांत प्रस्तुत किए। कौटिल्य ने स्व-शासन की प्रणाली को एक आदर्शवादी व्यवस्था मानते हैं। विदेश नीति के कई सिद्धांत जैसे मण्डल सिद्धांत, षाड्गुण्य नीति, कूटनीति के चार उपाय का प्रस्ताव रखा गया। इस प्रकार कौटिल्य राजनीति को कूटनीति के उच्चतम स्तर तक ले जाने के लिए प्रसिद्ध हुए। विदेश नीति एवं कूटनीति से संबन्धित ये सिद्धांत आज बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में अत्यन्त उपादेय हैं जिनमें से मण्डल सिद्धान्त की वर्तमान उपादेयता पर यहां विमर्श किया जा रहा है। यद्यपि समय के साथ इसके सैद्धांतिक स्वरूप में कुछ परिवर्तन हुए हैं किन्तु ये सिद्धान्त आज भी प्रासंङ्गिक हैं।

2. अर्थशास्त्र का मण्डल सिद्धान्त

अर्थशास्त्र ग्रन्थ कुल पन्द्रह अधिकरणों में विभक्त है जिसके छठें अधिकरण का नाम है – मण्डलयोनि। इस अधिकरण में सप्ताङ्ग राज्य एवं मण्डल-प्रकृति नामक महत्त्वपूर्ण राजनैतिक सिद्धान्तों का विवेचन प्राप्त होता है।

2.1 मंडल का स्वरूप

मंडल सिद्धांत एक अंतरराष्ट्रीय राजनीति से सम्बन्धित सिद्धांत है जो किसी देश के अन्य देशों के साथ संबंधों का आधार निर्धारित करता है। यह मुख्य रूप से भौगोलिक, राजनीतिक और व्यावसायिक आधारों पर केंद्रित है। विदेश नीति अधिकतर विभागीय प्रकृति पर आधारित होती है। मण्डल का अर्थ है एक ऐसा घेरा जो किसी राज्य को चारों ओर से घेरे रहता है। कौटिल्य के अनुसार इस घेरा उस राजा पर निर्भर करता है जो अपने राज्य का विस्तार करना चाहता है।

इस मण्डल या घेरे में 12 देश हैं। प्रत्येक राष्ट्र अपनी सीमाओं को बढ़ाने की इच्छा के साथ-साथ अपने सभी पड़ोसी देशों के साथ मित्रता बनाए रखना चाहता है, ताकि उन्हें शत्रु देशों से दूर रखा जा सके या उन्हें दुर्बल किया जा सके। देश अपने बराबर ताकत वाले देशों के साथ मित्रता और सहयोगी भाव बनाए रखकर दुर्बल देशों की मदद भी करते हैं।

दुनिया में अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए अमेरिका ने एक जैसी नीतियों वाले देशों के साथ मिलकर एक संगठन बनाया है, ताकि वे युद्ध से होने वाली हानि से स्वयं को और अपने सहयोगी देशों को बचा सकें। ऐसा इसलिए है क्योंकि कोई भी देश इस संगठन के किसी भी सदस्य देश पर हमला करने से डरता है। उदाहरण के लिए, इसे 'नॉर्थ अटलांटिक ट्रीटी ऑर्गनाइज़ेशन' (NATO) कहा जाता है। इस संगठन के नियमों के अनुसार किसी एक सदस्य देश पर हमले को पूरे संगठन पर हमला माना जाता है।

मण्डल प्रकृति के विभाजन में 12 प्रकार के राज्यों का उल्लेख कौटिल्य ने किया है।1

1. विजिगीषु

जो राजा अपने राज्य का विस्तार करने का इच्छुक हो और जिसमें उचित स्वभाव तथा नीति-शास्त्र का ज्ञान हो, उसे विजेताओं में गिना जाता है।

अधिगम के माध्यम से बच्चे बिना किसी शैक्षणिक दबाव के सहज रूप से सीखते हैं, जिससे उनमें आत्मविश्वास और सीखने

की रुचि दोनों बढ़ती हैं।

राजा आत्मद्यप्रकृति सम्पन्नो नयस्याधिष्ठानं विजिगीषु ।[2]

वह राजा जो आत्मिक गुणों यथा - बुद्धि, उत्साह, और नैतिक बल युक्त तथा भौतिक संसाधनों से संपन्न है, और जो नीति (न्याय और कूटनीति) का आधार है, वही 'विजिगीषु' एवं वैश्विक नेतृत्व करने योग्य है।

---

1. अर्थशास्त्र, 6.2.13
2. वही

वर्तमान परिदृश्य में भारत का G20 की अध्यक्षता करना, क्वाड (QUAD) और ब्रिक्स जैसे मंचों पर सक्रिय भूमिका निभाना और वैश्विक दक्षिण (Global South) की आवाज बनना एक आधुनिक 'विजिगीषु' के लक्षण हैं। यहां भारत केवल मूकदर्शक नहीं रहता, बल्कि वैश्विक निर्णयों को प्रभावित करता है।

2. अरि: अरि (शत्रु) वह राजा होता है जिसकी सीमा विजिगीषु के राज्य की सीमा के चारों ओर होती है।

3 मित्र: विजिगीषु के शत्रु अरि के परे स्थित वह राज्य जो विजिगीषु के हितों के अनुकूल हो तथा आवश्यकता पड़ने पर उसके साथ सहयोग कर सके, मित्र कहलाता है। यथा –

विजिगीषु → अरि ← अरि के परे स्थित सहयोगी राज्य = मित्र

इस संदर्भ में "शत्रोशत्रुः मित्रम्" कथन प्रसिद्ध है। मित्र की यह अवधारणा साझे राजनीतिक हितों और शक्ति-सन्तुलन पर आधारित सम्बन्ध है।

4 अरिमित्र: शत्रु का मित्र अरिमित्र कहलाता है। जो राज्य विजिगीषु के शत्रु का सहयोगी है, वह विजिगीषु की दृष्टि से अरिमित्र कहलाता है। वर्तमान में इसकी तुलना किसी rival state के strategic ally से की जा सकती है।

5 मित्र-मित्र: अरिमित्र के सामने या उसके आगे स्थित राज्य को मित्र-मित्र कहा जाता है। मण्डल में यदि कोई राज्य विजिगीषु का मित्र है, तो उस मित्र का अपना जो सहयोगी राज्य है, वह मित्र-मित्र कहलाता है। यहाँ तीसरा राज्य विजिगीषु परोक्ष मित्र है अतएव उसकी उपयोगिता मुख्यतः परोक्ष सहयोग एवं सामरिक समर्थन के रूप में दृष्टव्य है।

6 अरिमित्र-मित्र: शत्रु के मित्र अर्थात् विजिगिषु के मित्र के आगे स्थित राज्य। यह राज्य मित्रवत् होता है। इसे अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में extended strategic network of a competitor के रूप में समझा जा सकता है।

7 पार्ष्णिग्राह: वह राज्य है जो विजिगीषु के पश्चाद्भाग अथवा पीछे स्थित होकर उसके लिए कठिनाइयां उत्पन्न कर सकता है। जब विजिगीषु अपने आगे स्थित भू-भाग में किसी कार्य या संघर्ष में व्यस्त हो, तब पीछे स्थित यह राज्य उसके लिए सामरिक चुनौती बन सकता है। अतः इसे शत्रु माना गया है।

8 आक्रन्द: आक्रन्द पार्ष्णिग्राह के ठीक उल्टा विजिगीषु के लिए सहायक शक्ति के रूप में समझा जाता है। जब विजिगीषु को पीछे से उपजे संकटों का सामना कररहा होता है, तब आक्रन्द उसकी सहायता कर सकता है। इस प्रकार सम्बन्ध को इस तरह समझ सकते हैं - पार्ष्णिग्राह → विजिगीषु ← आक्रन्द

9 पार्ष्णिग्राहासार: जो शक्ति स्वयं विजिगीषु के पीछे स्थित विरोधी शक्ति के साथ सम्बन्ध रखती है और उसकी सहायता करने में सक्षम है, वह पार्ष्णिग्राहासार की भूमिका ग्रहण करती है। इस दृष्टि से यह भी विजिगीषु का शत्रु सिद्ध होता है।

10 आक्रन्दसार: यह आक्रन्द का सहयोगी (समर्थक) राज्य है। यदि आक्रन्द विजिगीषु की सहायता करने वाली शक्ति है, तो आक्रन्दसार वह शक्ति है जो आक्रन्द को सहायता प्रदान करती है। यह विजिगीषु का मित्र राष्ट्र सिद्ध होता है। आधुनिक भू-राजनीति में - विजिगीषु → मित्र/आक्रन्द → आक्रन्दसार

11 मध्यम: मध्यम एक ऐसा राष्ट्र है जो विजिगीषु और उसके शत्रु, दोनों के समीप स्थित होता है और अपनी शक्ति के आधार पर दोनों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। वर्तमान भू राजनैतिक परिदृश्य में यहां याह् समझने की आवश्यकता है कि मध्यम केवल तटस्थ राज्य नहीं होता है। इसमें इतनी क्षमता होती है कि वह आवश्यकता पड़ने पर विजिगीषु अथवा शत्रु में से किसी एक को समर्थन देकर शक्ति-सन्तुलन को प्रभावित कर सकता है। ऐसी शक्ति के रूप में स्थित है जो कि किसी एक गुट के साथ पूरी तरह से बँधी नहीं होती अर्थात् दोनों राष्ट्रों से सम्बन्ध बनाए रख सकती है। यह अपनी स्थिति का अपने राष्ट्रीय हितों के अनुकूल उपयोग भलीभांति कर सकती है।

12 उदासीन: यहां उदासीन निष्क्रिय राष्ट्र के अर्थ में नहीं है। इस राष्ट्र की सीमा विजिगीषु राज्य, शत्रु राज्य, मध्यम राज्य किसी से भी स्पर्श नहीं करती। भौगोलिक दृष्टि से भिन्न होते हुए भी जो राष्ट्र अपनी शक्ति एवं धनबल के आधार पर दूर स्थित राज्यों पर अपना वर्चस्व एवं प्रभुत्व स्थापित करने की क्षमता रखता हो वह उदासीन राष्ट्र है। भू राजनितिक परिप्रेक्ष्य में यह राज्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। वर्तमान समय में ऐसे राज्यों को महाशक्ति के नाम से जानते हैं जो कि किसी क्षेत्रीय संघर्ष में सैन्य सहायता, आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग से वहां के संघर्ष की दिशा तय करते हैं यथा संयुक्त राज्य अमेरिका।

इस प्रकार कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त में विजिगीषु को केन्द्र मानकर बारह प्रकार के राज्यों का उल्लेख मिलता है। यह विभाजन केवल भौगोलिक अवस्थिति पर आधृत न होकर शक्ति, हित, सुरक्षा और पारस्परिक राजनीतिक सम्बन्धों पर आधारित है। कौटिल्य का यह मण्डल सिद्धान्त आधुनिक शक्ति संतुलन, रणनीतिक सहभागिता, बहु-आयामी रणनीतिक साझेदारी और क्षेत्रीय भूराजनीति को समझने के लिए एक उपयोगी वैचारिक ढाँचा प्रस्तुत करता है।

3. अर्थशास्त्र में विवेचित शत्रु मित्र की अवधारणा

मण्डल सिद्धान्त के साथ ही कौटिल्य ने राष्ट्र के शत्रुओं एवं मित्र की अवधारणा भी प्रस्तुत की है, जहां 3 प्रकार के शत्रु व मित्र बताए गए हैं –

4.1 स्वाभाविक मित्र व शत्रु – विजिगिषु को कुछ शत्रु व मित्र अपनी सीमापवर्ती क्षेत्र पर स्वाभाविक रूप से मिलते हैं, यथा भारत को शत्रु के रूप में पाकिस्तान एवं चीन स्वाभाविक तौर पर मिले हैं। मित्र के रूप में नेपाल, भूटान इत्यादि राष्ट्र मिले हैं।

4.2 सहज-मित्र एवं सहज-शत्रु - भौगोलिक सम्बन्ध की अपेक्षा वंशगत, उत्तराधिकार-संबंधी परिस्थितियों से जन्य मित्र एवं शत्रु। राजवंशीय राजनीति में उत्तराधिकार को लेकर हितधारी का विजिगीषु से प्रतिरोध के सम्बन्ध में यह अवधारणा उत्पन्न हुई।

4.3 कृत्रिम-मित्र और कृत्रिम-शत्रु - वर्तमान अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों में बहुत से सम्बन्ध स्थायी मित्रता या स्थायी शत्रुता के बजाय भू-राजनैतिक हितों पर आधारित होते हैं। आर्थिक सहायता, रक्षा-सहयोग, ऊर्जा, प्रौद्योगिकी, समुद्री सुरक्षा, निवेश,

व्यापार अथवा किसी तीसरे राज्य के विरुद्ध रणनीतिक सहयोग के कारण दो राष्ट्र निकट आ सकते हैं।

4. निष्कर्ष

प्राचीन कौटिलीय मण्डल में भूगोल सम्बन्धों का प्रमुख निर्धारक था, जबकि आधुनिक मण्डल-राजनीति में भूगोल के साथ-साथ अर्थव्यवस्था, व्यापार, ऊर्जा, संस्कृति, तकनीक, समुद्री मार्ग, रक्षा, कूटनीति और वैश्विक संस्थाएँ भी महत्त्वपूर्ण निर्धारक बन गई हैं। आचार्य कौटिल्य का मण्डल सिद्धान्त प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन की यथार्थवादी एवं व्यावहारिक दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों को केवल नैतिक अथवा भावनात्मक आधार पर न देखकर शक्ति, स्वार्थ, सुरक्षा, भौगोलिक स्थिति और राजनीतिक हितों के परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास किया गया है। समकालीन भू-राजनीति में मण्डल सिद्धान्त की उपयोगिता इसी मूल यथार्थवादी दृष्टिकोण में निहित है। यद्यपि आधुनिक अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था प्राचीन राज्य-व्यवस्था से भिन्न है और आज सम्बन्धों का निर्धारण केवल भौगोलिक निकटता से नहीं होता, तथापि सुरक्षा, आर्थिक हित, व्यापार, ऊर्जा, तकनीकी सहयोग, सामरिक साझेदारी और कूटनीतिक शक्ति जैसे कारक आज भी राज्य-व्यवहार को प्रभावित करते हैं। भारत-चीन सम्बन्धों में प्रतिस्पर्धा एवं आर्थिक परस्परता, भारत-अमेरिका सम्बन्धों में रणनीतिक सहयोग, भारत-रूस सम्बन्धों की निरन्तरता तथा विभिन्न बहुपक्षीय मंचों में भारत की सक्रिय सहभागिता इस बहुआयामी सम्बन्ध-व्यवस्था को स्पष्ट करती है। वैश्वीकरण ने मण्डल की परिधि को भी विस्तृत कर दिया है, जिसके कारण किसी एक क्षेत्रीय संघर्ष का प्रभाव सम्पूर्ण विश्व पर पड़ सकता है। अतः कौटिल्य का मण्डल सिद्धान्त वर्तमान भू-राजनीति का प्रत्यक्ष प्रतिरूप नहीं, बल्कि बदलते शक्ति-समीकरणों, राष्ट्रीय हितों एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को समझने के लिए एक प्रभावी भारतीय वैचारिक एवं विश्लेषणात्मक ढाँचा प्रस्तुत करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. उपाध्याय, बलदेव, वैदिक साहित्य और संस्कृति, शारदा संस्थान, वाराणसी, 2005
2. काणे, पी.वी., धर्मशास्त्र का इतिहास, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, 1992
3. कौशिक, पंकजा घई, संस्कृत में राजनीतिक चिंतन, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2020
4. गैरोला, वाचस्पति)अनुवादक(, कौटिल्य अर्थशास्त्र, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1984
5. गैरोला, वाचस्पति, वैदिक साहित्य और संस्कृति, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, 1989
6. चारण, दिनेश कुमार (व्याख्याकार), कौटिल्य अर्थशास्त्र, राजस्थानी ग्रन्थागार , जोधपुर, 2020
7. चारण, दिनेश कुमार, कौटिल्य के अर्थशास्त्र का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2020
8. पाण्डेय, विमल चन्द्र, प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास) भाग-१(, सेन्ट्रल पब्लिशिंग हाउस, प्रयागराज, 1998
9. विशाखदत्त, मिश्र, जगदीश चंद्र (व्याख्याकार), मुद्राराक्षस, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 1990
10. शास्त्री, उदयवीर (अनुवादक), कौटिल्य अर्थशास्त्र (हिंदी अनुवाद(, मेहर चंद लक्ष्मण दास, दिल्ली, 1961

ISSN: 3139-843X

11. शास्त्री, जी पी. तिवारी, श्यामलेश कुमार (टीकाकार), अर्थशास्त्र, हिंदी टीका, चौखंबा सुरभारती प्रकाशन, 2017
12. सरस्वती, स्वामी जगदीश्वरानन्द, शुक्रनीतिसार, रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत, 2008